International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 17-11-2020; Accepted: 02-12-2020; Published: 17-12-2020
www.hindijournal.com
Volume 6, Issue 6, 2020, Page No. 167-168

सिद्ध साहित्य की प्रवृत्तियां एवं विशेषताएं

डॉ. सन्तोष कुमार पाण्डेय
सहायक आचार्य, वीरभूमि राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालयत्र, महोबा, उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश
सिद्ध साहित्य हिंदी साहित्य की अमूल्य निधि है। आदिकालीन सिद्धों ने कविता की जो प्रवृत्तियां आरंभ की, उनका प्रभाव भक्तिकाल तक चलता रहा। कबीर की कविता में जो रूढ़ियों का विरोध या अख्खड़पन मिलता है; वह इन सिद्ध कवियों की ही देन है। आचार्य शुक्ल ने लिखा है कि, "84 सिद्धों में बहुत से कछुए, चमार, धोबी, डोम, कहार, लकड़हारे, दर्जी तथा बहुत से शूद्र कहे जाने वाले लोग थे। अतः जाति–पांति के खंडन तो ये स्वयं ही थे।" सबसे पहले दोहा–चौपाई पद्धति का प्रयोग सरहपा ने किया। इनकी भाषा तो हिंदी ही है, केवल उस पर यत्र–तत्र अपभ्रंस का प्रभाव है। वज्रयानियों को ही सिद्ध कहा गया। सिद्धों ने बौद्ध धर्म के वज्रयान तत्व का प्रचार करने के लिए जो साहित्य जनभाषा में लिखा वह हिंदी के सिद्ध साहित्य की सीमा में आता है। सिद्धों ने वर्णाश्रम धर्म पर तीव्र प्रहार किया। इन्होंने संध्या भाषा–शैली में रचनाएं की हैं। राहुल सांकृत्यायन ने 84 सिद्धों के नामों का उल्लेख किया है। जिनमें सिद्ध सरहपा से यह साहित्य आरम्भ होता है। 84 सिद्धों में सरहपा, सबरपा, लुईपा, डोम्भिपा, कण्हपा, कुक्कुरिपा इत्यादि, हिंदी के प्रमुख सिद्ध कवि हैं। सिद्धों के आगे पा शब्द जुड़ा रहता है जो आदर सूचक है। 84 सिद्धों में कई योगनियां भी शामिल हैं। सिद्धों के योगदान को प्रस्तुत लेख में रेखांकित करने का प्रयास किया गया है।

मूल शब्दः सिद्ध, व्रजयान, नाथ, अख्खड़पन, दोहा, सरहपा

सिद्ध संप्रदाय को हिंदू धर्म की परंपरा का हिंदू धर्म से प्रभावित एक धार्मिक आंदोलन माना जाता है। तांत्रिक क्रियाओं में आस्था व मंत्र द्वारा सिद्धि चाहने के कारण इन्हें सिद्ध कहा जाने लगा। सिद्धों ने अपनी सांप्रदायिक मान्यताओं के प्रचार हेतू जो साहित्य रचा उसको सिद्ध साहित्य कहा गया। बौद्ध परंपरा से संबंधित होने के कारण वे वैदिक मान्यताओं और वर्ण व्यवस्था का तीव्र खंडन करते हैं और नैरात्म भावना, काया योग और सहज शून्य की साधना का वर्णन करते हैं। उनका दावा है कि जो पंडित लोग सारे वेद व पुराण पढ़ चुके हैं। वे भी इस सत्य को नहीं जानते हैं कि बुद्ध या परम तत्व हमारे भीतर ही है –

"पंडित सअल सत्य वक्खाणअ।
देहहिं बुद्ध बसन्त ण जाणअ।।"– सरहपा

जैसे भौंरा पके हुए बेल के बाहर–बाहर घूमता है और बेल का रसास्वादन नहीं कर पाता। उसी प्रकार पंडित लोग आगम, वेद पुराण को ढोते रहते हैं और उनका सारतत्व नहीं जान पाते –

"आगम–वेअ पुराणे पण्डित मान बहन्ति।
पक्क सिरिफल अलिम जिमि वाहेरित भ्रमयंति।।" – कण्हपा

सिद्धों ने आडंबरों का विरोध किया और शून्य पर आधारित साधना प्रक्रिया का समर्थन किया। इनका मानना है कोई व्यक्ति तभी सिद्ध बन सकता है जब वह सभी प्रकार के आकर्षण व मोह से परे हो जाए। सरहपा कहते हैं –

"जहि मण पवण न संचरई, रवि ससि वाह पवेस।
ताहि बढ़ं चित्त विसाम करू, सरहें कहिउ उएस।।"

(सरहपा कहते हैं कि जहां मन व पवन की गति भी नहीं है। जहां सूर्य और चंद्रमा को भी प्रवेश नहीं मिल सकता; वहीं अपने मन को ले जाओ ताकि चित्त को विश्राम मिले)

सिद्धों ने साधना मार्ग के रूप में पंचमकार पद्धति को स्वीकार किया है। पंचमकार का अर्थ है– मत्स्य, मदिरा, मांस, मुद्रा तथा मैथुन। इनकी मान्यता थी कि सुखों को चरम स्तर पर भोगकर मन को ऐसी अवस्था में लाया जा सकता है, जहां वह हर आकर्षण से मुक्त हो जाए। सुखों का भोग साधन के रूप में है, साध्य के रूप में नहीं। इन्होंने गुरु को भी अत्यधिक महत्व दिया क्योंकि सतगुरु के माध्यम से ही वास्तविक ज्ञान प्राप्त होता है। इसके अलावा समस्त बाह्यआडंबरों का निषेध इनकी प्रमुख विशेषता है।

व्रजयानियों को ही सिद्ध कहा गया है। सिद्धों की संख्या 84 मानी गयी है। राहुल सांकृत्यायन और हजारीप्रसाद द्विवेदी ने तो 84 सिद्धों के नामों का भी उल्लेख किया है। यह लोग अपने नाम के पीछे श्पाश जोड़ते थे; जैसे– सरहपा, लुइपा, सबरपा, डोम्भिपा, कण्हपा, कुक्करिपा। इन सिद्धों के पीछे लगा 'पा' शब्द सम्मानसूचक "पाद" शब्द का विकृत रूप है। इनमें से 14 सिद्धों की रचनाएं ही अभी तक उपलब्ध हैं। सिद्ध साहित्य का रचनाकाल सातवीं से तेरहवीं शताब्दी के मध्य तक है। इन सिद्ध कवियों की रचनाएं प्रमुखतः दो काव्य रूपों में मिलती है – 'दोहाकोष' और 'चर्यापद'। सिद्धाचार्यों द्वारा लिखित दोहों का संग्रह दोहाकोष के नाम से जाना जाता है तथा उनके द्वारा रचित पद 'चर्यापद' या 'चर्यागीत' के नाम से प्रसिद्ध है।

सिद्धों का शिल्प पक्ष साहित्यिक सूक्ष्मताओं से युक्त नहीं है क्योंकि ये लोग कवि नहीं थे बल्कि अपने संप्रदाय की मान्यताओं का प्रचार करने के लिए ही साहित्य रचते थे। इनका सारा साहित्य मुक्तक के रूप में है जो चर्यापद और दोहाकोषों में संकलित है। इनकी भाषा अर्धमागधी अपभ्रंस थी जिससे आगे चलकर पूर्वी हिंदी का विकास हुआ। कहीं–कहीं इन्होंने अपनी आंतरिक अनुभूतियों को एक विशेष प्रतीक भाषा में व्यक्त किया जिसे संधा भाषा कहते हैं। इनका शिल्प में महत्वपूर्ण योगदान छंद के स्तर पर है। इन्होंने दोहा, सोरठा जैसे छंदों का प्रयोग किया। सिद्ध साहित्य अर्धमागधी अपभ्रंस भाषा में लिखा गया है। सिद्धों की रचनाएं मूलतः उपदेशपरक, नीतिपरक एवं रहस्यपरक हैं।

सिद्धों का संबंध बौद्ध धर्म की व्रजयान शाखा से था। सिद्धों की संख्या 84 मानी गयी है। प्रथम सिद्ध सरहपा (8वीं शताब्दी) सहज जीवन पर बहुत अधिक बल देते थे। इन्हें ही सहजयान

का प्रवर्तक कहा गया है। सिद्धों ने नैरात्म भावना, काया योग, सहज शून्य तथा समाधि की भिन्न–भिन्न अवस्थाओं का वर्णन किया है। इन्होंने वर्णाश्रम व्यवस्था पर तीव्र प्रहार किया है। इन्होंने संधा भाषा–शैली में रचनाएं की हैं। संधा भाषा वस्तुतः अंतस्साधनात्मक अनुभूतियों का संकेत करने वाली प्रतीक भाषा है इसलिए प्रतीकार्थ खुलने पर ही यह समझ में आती है।

सरहपा को सरहपाद, राहुलभद्र, सरोजव्रज आदि कई नामों से जाना जाता है। इनका समय 769 ई. के लगभग स्वीकार किया जाता है। माना जाता है कि इन्होंने 32 ग्रंथों की रचना की जिनमें 'कायाकोष', 'दोहाकोष', 'सरहपादगीतिका' तथा 'चर्यागीति–दोहाकोष' प्रमुख हैं। प्रथम सिद्ध सरहपा सहज जीवन पर बहुत बल देते थे। इन्हें ही सहजयान का प्रवर्तक कहा जाता है। शर (तीर, बाण, बरछी, भाला) बनाने वाली कन्या के साथ विवाह करने के कारण इनका नाम सरहपा पड़ा। सरहपा ने पाखंड व आडम्बर का विरोध किया तथा गुरु सेवा को महत्व दिया। शबरपा, सरहपा के शिष्य थे। चर्यापद इनकी प्रसिद्ध कृति है। शबरपा के शिष्य लुइपा का 84 सिद्धों में सर्वोच्य स्थान है। डोम्भिपा ने 'डोम्बि–गीतिका' लिखी। कन्हपा ने सर्वाधिक कृतियों की रचना की जिनमें 'कण्हपादगीतिका' तथा 'दोहाकोष' प्रमुख हैं। सिद्धों ने जनभाषा में उपदेश दिया और ग्रंथों की रचना की इसलिए यह जनसामान्य के लिए अधिक ग्राह्य सिद्ध हुआ। रूढियां का खंडन तो सिद्धों की सामान्य विशेषता है। सिद्धों की वाणियां सदियों से रुग्ण समाज के लिए औषधि साबित हुई। सिद्ध साहित्य के महत्व को नकारा नहीं जा सकता। सिद्धों ने अपनी वाणियों से भक्ति आंदोलन की पूर्वपीठिका तैयार की। कबीर और तुलसी ने दोहा–चौपाई शैली से जो भव्य ग्रंथ रचे; उसकी नींव सिद्ध कवियों ने ही डाली थी।

संदर्भ

1. हिंदी साहित्य का इतिहास– आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, आठवां संस्करण– 2012
2. हिंदी भाषा और साहित्य, संपादक– परमानंद श्रीवास्तव, जवाहर पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, संशोधित संस्करण– 2010
3. हिंदी साहित्यः उद्‌भव और विकास– हजारीप्रसाद द्विदी, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, छठां संस्करण– 1990
4. हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास– रामस्वरूप चतुर्वेदी, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, उन्नीसवां संस्करण– 2006
5. हिंदी साहित्य की भूमिका– हजारीप्रसाद द्विदी, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, छठां संस्करण – 2016